दुनिया के तमाम इनसानों के लिए

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) का सन्देश

सय्यद अबुल आला मौदूदी

अनुवादक

कौसर यज़दानी

بسم الله الرحمن الرحيم

हज़रत मुहम्मद सल्ल० के जीवन-आचरण का सन्देश[1]

श्रीमान वाइस चान्सलर, अध्यक्ष छात्र यूनियन, छात्रो, छात्राओ!

मुझे निमंत्रित किया गया है कि मैं आपकी इस सभा में अल्लाह के रसूल सल्ल० के जीवन-आचरण के सन्देश पर कुछ कहूं। इस विषय पर अगर तार्किक क्रम के साथ वार्ता की जाए, तो सबसे पहले हमारे सामने यह सवाल आता है कि एक नबी के जीवन-आचरण का ही सन्देश क्यों? किसी और का सन्देश क्यों नहीं? दूसरे नबियों में से भी सिर्फ हज़रत मुहम्मद सल्ल० के जीवन-आचरण का सन्देश, दूसरे नबियों और धार्मिक नेताओं के जीवन-आचरण का सन्देश क्यों नहीं? इस प्रश्न पर शुरू ही में वार्ता करना इसलिए ज़रूरी है कि हमारा मन इस बात पर पूरी तरह सन्तुष्ट हो जाए कि वास्तव में हम पुराने और नए, हर ज़माने के किसी नेता के जीवन-आचरण से नहीं, बल्कि एक नबी के जीवन आचरण से मार्ग-दर्शन प्राप्त कर सकते हैं और किसी दूसरे नबी या धार्मिक गुरू के जीवन में नहीं, बल्कि मुहम्मद सल्ल० के जीवन में ही हम को वह सही और पूर्ण मार्ग-दर्शन मिल सकता है, जिसके हम सच में मुहताज हैं।

ख़ुदाई हिदायत (ईश्वरीय मार्ग-दर्शन) की ज़रूरत

यह एक ऐसी सच्चाई है, जिससे इंकार नहीं किया जा सकता कि ज्ञान का स्रोत अल्लाह की हस्ती है, जिसने इस सृष्टि की रचना की है और इसमें इंसान को पैदा किया है। उसके सिवा सृष्टि की सच्चाइयों का और स्वयं मानव-स्वभाव और उसकी वास्तविकता का ज्ञान और किस को हो सकता है। रचयिता ही तो अपनी रचनाओं को जान सकता है, रचना अगर कुछ जानेगी तो रचयिता के बताने ही से जानेगी, उसके पास खुद अपना कोई साधन ऐसा नहीं है, जिससे वह हकीक़त को जान सके। इस मामले में दो किस्म की चीज़ों का अन्तर अच्छी तरह समझ लेना चाहिए, ताकि बात गड्ड-मड्ड न होने पाए —

---

१. यह मौलाना सैयद अबुल आला मौदूदी रह० का वह भाषण है, जो २२ अक्तूबर सन् ७५ ई० को पंजाब यूनिवर्सिटी यूनियन के बुलावे पर यूनिवर्सिटी के नए कैम्पस में दिया गया था।

एक क़िस्म की चीज़ें वे हैं जिनकी आप इन्द्रियों द्वारा अनुभूति कर सकते हैं और उनसे प्राप्त जानकारियों को सोच-विचार, तर्क, अनुभव आदि की सहायता से क्रमागत बना कर नए-नए निष्कर्ष निकाल सकते हैं। इस प्रकार की चीज़ों के बारे में ऊपरी जगत से किसी शिक्षा के आने की ज़रूरत नहीं। यह आप की अपनी खोज, आपका अपना चिन्तन, और आपकी अपनी गवेषणता का क्षेत्र है। इसे आप पर छोड़ा गया है कि अपने आस-पास की दुनिया में पायी जाने वाली चीज़ों को ढूंढ़-ढूंढ़ कर निकालें, उनमें काम करने वाली शक्तियों को मालूम करें, उनके भीतर कार्यशील क़ानूनों को समझें और विकास-पथ पर आगे बढ़ते चले जाएं। यद्यपि इस मामले में भी आप के पैदा करने वाले ने आप का साथ नहीं छोड़ दिया है, वह इतिहास के मध्य बड़े अनजाने ढंग से एक क्रम के साथ अपनी पैदा की हुई दुनिया से आपका परिचय कराता रहा है, जानकारी के नये-नये द्वार आप पर खोलता रहा है और समय-समय पर अन्तर्ज्ञान के रूप में किसी न किसी इंसान को ऐसी बात सुझाता रहा है, जिससे वह कोई नयी चीज़ ईजाद या कोई नया क़ानून मालूम कर सकता है, लेकिन बहरहाल है यह मानव-ज्ञान का क्षेत्र, जिसके लिए किसी नबी या किसी किताब (ग्रंथ) की ज़रूरत नहीं है और इस क्षेत्र में जो जानकारियां चाहिएं, उन्हें हासिल करने के साधन इंसान को जुटा दिए गये हैं।

दूसरी क़िस्म की वे चीज़ें हैं, जो हमारी इन्द्रियों की पहुंच से परे हैं, जिनकी अनुभूति हम कैसे भी नहीं कर सकते, जिन्हें न हम तोल सकते हैं, न नाप सकते हैं, न अपने ज्ञान के साधनों में से किसी साधन का उपयोग कर के उनको मालूम कर सकते हैं। दार्शनिक और वैज्ञानिक उनके बारे में अगर कोई राय बनाते हैं तो वह मात्र अटकल पर आधारित होती है, जिसे 'ज्ञान' नहीं कहा जा सकता। ये आख़िरी सच्चाइयां (Ultimate Realities) हैं, जिनके बारे में तर्कयुक्त सिद्धान्तों को स्वयं वे लोग भी यक़ीनी नहीं कह सकते, जिन्होंने उन सिद्धान्तों को पेश किया है और अगर वे अपने ज्ञान की सीमाओं को जानते हों, तो उन पर न ख़ुद ईमान ला सकते हैं, न किसी को ईमान लाने के लिए कह सकते हैं।

नबियों की पैरवी की ज़रूरत

इस क्षेत्र में ज्ञान अगर पहुंचता है, तो केवल अल्लाह की हिदायत (मार्ग-दर्शन) से पहुंचता है, क्योंकि वही तमाम सच्चाइयों का जानने वाला है, और जिस माध्यम से अल्लाह इंसान को यह ज्ञान देता है, वह वह्य है, जो सिर्फ़

नबियों पर आती है। अल्लाह ने आज तक कभी यह नहीं किया कि एक किताब छाप कर हर इंसान के हाथ में दे दी हो और उससे कहा हो कि इसे पढ़ कर खुद मालूम कर ले कि तेरी और सृष्टि की वास्तविकता क्या है और उस वास्तविकता की दृष्टि से दुनिया में तेरी क्या कार्य-नीति होनी चाहिए। इस ज्ञान को इंसानों तक पहुंचाने के लिए उसने हमेशा नबियों को ही माध्यम बनाया है, ताकि वे इस ज्ञान की शिक्षा देकर ही न रह जाएं, बल्कि उसे समझाएं, उसके अनुसार अमल भी करके दिखाएं, उसके ख़िलाफ़ चलने वालों को सीधे रास्ते पर लाने की कोशिश भी करें और उसे अपना लेने वालों को एक ऐसे समाज के रूप में सुसंगठित भी करें, जिसके जीवन का हर विभाग इस ज्ञान का व्यावहारिक प्रतीक हो।

इस संक्षिप्त विवरण से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि हम मार्ग-दर्शन के लिए केवल एक नबी के जीवन-आचरण ही के मुहताज हैं, कोई ग़ैर-नबी अगर नबी की पैरवी करने वाला न हो, तो भले ही वह अपार ज्ञानी और महा पंडित हो, हमारा मार्ग-दर्शक नहीं हो सकता, क्योंकि उस के पास सच्चाई का ज्ञान नहीं है और जिसे सच्चाई का ज्ञान न हो, वह हमें कोई सही और सच्ची जीवन-व्यवस्था नहीं दे सकता।

मुहम्मद सल्ल० के सिवा दूसरे नबियों से हिदायत न मिलने का कारण

अब इस प्रश्न को लीजिए कि जिन बुज़ुर्गों को हम नबियों की हैसियत से जानते हैं और जिन धार्मिक गुरुओं के बारे में सोचा जा सकता है कि शायद वे नबी हों, उनमें से हम सिर्फ़ एक मुहम्मद, अल्लाह के रसूल सल्ल० ही के जीवन-आचरण से क्यों सन्देश प्राप्त करने की कोशिश करते हैं? क्या यह किसी किस्म के तास्सुब की वजह से है या इसका कोई उचित कारण है?

मैं कहता हूं कि इसका एक अत्यन्त उचित कारण है। जिन नबियों का उल्लेख क़ुरआन में किया गया है, उनको यद्यपि हम यक़ीनी तौर पर नबी मानते हैं, लेकिन उनमें से किसी की शिक्षा और किसी का जीवन-आचरण भी हम तक किसी प्रामाणिक तथा विश्वसनीय माध्यम से नहीं पहुंचा है कि हम उसका पालन कर सकें। हज़रत नूह, हज़रत इब्राहीम, हज़रत इस्हाक़, हज़रत यूसुफ़, हज़रत मूसा, और हज़रत ईसा अलैहि० निस्सन्देह नबी थे और हम उन सब पर ईमान रखते हैं, मगर उन पर नाज़िल होने वाली कोई किताब आज सुरक्षित रूप में मौजूद नहीं है कि उससे हम मार्ग-दर्शन प्राप्त कर सकें और उनमें से किसी की ज़िन्दगी

के हालात भी ऐसे सुरक्षित तथा विश्वसनीय तरीक़े से हम तक नहीं पहुँचे हैं कि हम अपने व्यक्तिगत तथा सामूहिक जीवन के विभिन्न विभागों में उन को अपना मार्ग-दर्शक बना सकें। अगर इन सारे नबियों की शिक्षाओं और जीवन-आचरण पर कोई व्यक्ति कुछ लिखना चाहे तो कुछ पन्नों से अधिक नहीं लिख सकता और वह भी सिर्फ़ क़ुरआन की मदद से, क्योंकि क़ुरआन के सिवा उनके बारे में कोई प्रामाणिक सामग्री मौजूद नहीं है।

यहूदी धर्म के ग्रन्थों और नबियों का हाल

हज़रत मूसा और उनके बाद आने वाले नबियों और उनकी शिक्षाओं के बारे में कहा जाता है कि वे बाइबिल के ओल्ड टेस्टामेंट में हैं। लेकिन ऐतिहासिक दृष्टि से तनिक बाइबिल का जायज़ा लेकर देखिए। असल तौरात, जो हज़रत मूसा अलै० पर नाज़िल हुई थी, छठी सदी ईसा पूर्व में बैतुलमक़्दिस की तबाही के वक़्त नष्ट हो चुकी थी और उसी के साथ दूसरे उन नबियों की किताबें भी नष्ट हो गयी थीं, जो उस समय से पहले हो गुज़रे थे। पांचवीं सदी ईसा पूर्व में जब बनी इस्राईल बाबिल की क़ैद से रिहा होकर फ़लस्तीन पहुंचे तो हज़रत उज़ैर ने कुछ दूसरे बुज़ुर्गों की मदद से हज़रत मूसा अलै० के जीवन-आचरण और बनी इस्राईल के इतिहास को तैयार क़िया और उसी में तौरात की उन आयतों को भी मौक़े के मुताबिक़ दर्ज कर दीं जो उन्हें और उनके मददगारों को मिल सकीं।

उसके बाद चौथी सदी ईसा पूर्व से लेकर दूसरी सदी ईसा पूर्व तक विभिन्न लोगों ने (जो न जाने कौन थे) उन नबियों की किताबों को (न मालूम किस तरह) लिख डाला, जो उनसे कई सदी पहले गुज़र चुके थे, जैसे ३०० ईसा पूर्व में हज़रत यूनुस के नाम से एक किताब किसी आदमी ने लिखकर बाइबिल में दर्ज कर दी, हालांकि वह आठवीं सदी ईसा पूर्व के नबी थे। ज़बूर हज़रत दाऊद की मृत्यु के पांच सौ वर्ष बाद लिखी गयी और उसमें हज़रत दाऊद के अलावा लगभग एक सौ दूसरे कवियों की कविताएं भी शामिल कर दी गयीं, जो मालूम नहीं किस तरह ज़बूर तैयार करने वालों को पहुंची थीं। हज़रत सुलेमान की मृत्यु पूर्व ईसा ९३३ में हुई और सुलेमानी 'कहावतें' २५० ईसा पूर्व में लिखी गयीं और उसमें दूसरे बहुत से ज्ञानियों के कथन शामिल कर दिए गये।

तात्पर्य यह कि बाइबिल की किसी किताब की प्रामाणिकता भी उन नबियों तक नहीं पहुंचती, जिस से वह जोड़ दी गयी है। इस पर आगे की बात यह है कि इब्रानी बाइबिल की ये किताबें भी सन् ७० ई० में बैतुलमक़्दिस की दूसरी

तबाही के वक़्त नष्ट हो गयीं और उनका केवल यूनानी अनुवाद बाक़ी रह गया, जो २५८ ईसा पूर्व से पहली सदी ईसा पूर्व तक किया गया था। इब्रानी बाइबिल को दूसरी सदी ईसवी में यहूदी विद्वानों ने उन मस्विदों की मदद से लिख डाला, जो बचे रह गये थे। उसका प्राचीनतम संस्करण जो अब पाया जाता है ९१६ ई० का लिखा हुआ है। उसके सिवा और कोई इब्रानी प्रति अब मौजूद नहीं है। मृत सागर के क़रीब क़ुमरान की गुफ़ा में जो इब्रानी अभिलेख मिले हैं, वे भी अधिक से अधिक दूसरी और पहली सदी ईसा पूर्व के लिखे हुए हैं और उनमें बाइबिल के सिर्फ़ कुछ बिखरे टुकड़े ही पाए जाते हैं। बाइबिल की पहली पांच किताबों का जो संग्रह सामरियों के यहां मिलता है, उसका प्राचीनतम संस्करण ग्यारहवीं सदी ईसवी का लिखा हुआ है। यूनानी अनुवाद जो दूसरी और तीसरी सदी ईसा पूर्व में किया गया था, उसमें बहुत ज़्यादा ग़लतियां भरी हुई थीं और उस अनुवाद से लेटिन भाषा का अनुवाद दूसरी और तीसरी सदी ईसवी में हुआ। हज़रत मूसा और बाद के बनी इसराईल के नबियों के हालात और उनकी शिक्षाओं के बारे में इस सामग्री को आख़िर किस कसौटी पर परख कर प्रामाणिक कहा जा सकता है।

इसके अलावा यहूदियों में कुछ सीना-ब-सीना बातें भी पायी जाती थीं, जिन्हें ज़ुबानी क़ानून कहा जाता था। यह तेरह-चौदह सौ वर्ष तक तो अलिखित रहीं, दूसरी सदी ईसवी के आख़िर और तीसरी सदी के आरंभ में रिब्बी यहूद इब्ने शमूऊन ने उनको 'मिश्ना' के नाम से लिखित प्रारूप बना दिया। यहूदियों के फ़लस्तीनी विद्वानों ने उनकी टीकाएं हलका के नाम से और बाबिली उलेमा ने हग्गादा के नाम से तीसरी और पांचवीं सदी में लिखी और इन्हीं तीन किताबों का संग्रह तलमूद कहलाता है। इन के किसी कथन का कोई प्रमाण नहीं है, जिनसे मालूम हो सके कि यह किन लोगों से किन लोगों तक पहुंची।

हज़रत ईसा और ईसाई धर्म की किताबों का हाल

कुछ ऐसा ही हाल हज़रत ईसा के जीवन-आचरण और शिक्षाओं का है। असल इंजील, जो ख़ुदा की तरफ़ से वह्य के ज़रिए उन पर नाज़िल हुई थी, उसे उन्होंने ज़ुबानी ही लोगों को सुनाया और उनके शिष्यों ने भी ज़ुबानी ही उसे दूसरों तक इस तरह पहुंचाया कि आपके हालात और इंजील की आयतें सबको गड्ड-मड्ड कर दिया। उनमें से कोई चीज़ भी मसीह अलै० के ज़माने में या उनके बाद लिखी ही नहीं गयी। लिखने का काम उन ईसाइयों ने किया जिनकी भाषा

यूनानी थी, हालांकि हज़रत ईसा की भाषा सुरयानी या आरामी थी और उनके शिष्य भी यही बोली बोलते थे। भाषा बोलने-लिखने वाले बहुत-से लेखकों ने उन कथनों को आरामी भाषा में सुना और यूनानी में लिखा। उन लेखकों की लिखी हुई पुस्तकों में से कोई भी सन् ७० ई० से पहले की नहीं है और उनमें से किसी ने भी घटना या हज़रत ईसा के किसी कथन का कोई प्रमाण नहीं दिया, जिससे मालूम होता कि उन्होंने कौन सी बात किस से सुनी थी, फिर इन की लिखी हुई किताबें भी सुरक्षित नहीं रहीं। बाइबिल के न्यू टेस्टामेंट की हज़ारों यूनानी प्रतियां जमा की गयीं, मगर इनमें से कोई भी चौथी सदी ईसवी से पहले की नहीं है, बल्कि अधिकतर ग्यारहवीं से चौदहवीं सदी तक की हैं। मिस्र में पापरिस पर लिखे हुए जो बिखरे हुए अंश मिले हैं, उनमें से भी कोई तीसरी सदी से अधिक का पुराना नहीं है। यूनानी से लेटिन भाषा में अनुवाद किसने कब और कहां किया? इसके बारे में कुछ नहीं मालूम। चौथी सदी में पोप के हुक्म से उस पर पुनर्दृष्टि डाली गयी और फिर सोलहवीं सदी में उसे छोड़ कर यूनानी से लेटिन में एक नया अनुवाद कराया गया। यूनानी से सुरयानी भाषा में चारों इंजीलों का अनुवाद शायद सन् २०० में हुआ था, पर इसकी भी प्राचीनतम प्रति, जो अब पायी जाती है, चौथी सदी की लिखी हुई है और पांचवीं सदी की जो हस्तलिखित प्रतिलिपि मिली है, वह उससे बहुत भिन्न है। सुरयानी से जो अरबी अनुवाद किए गए, उनमें से भी कोई अनुवाद आठवीं सदी से पहले का नहीं है। यह भी एक अजीब बात है कि सत्तर के क़रीब इंजीलें लिखी गयी थीं, पर उन में से सिर्फ़ चार को मसीही धर्म के गुरुओं ने कुबूल किया और बाक़ी सब को रद्द कर दिया। कुछ नहीं मालूम कि स्वीकार किया तो क्यों? और रद्द किया तो क्यों? क्या इस सामग्री के आधार पर हज़रत ईसा का जीवन-आचरण और उनकी शिक्षाओं को किसी स्तर पर भी प्रामाणिक माना जा सकता है?

ज़रदुश्त का जीवन-आचरण और शिक्षाओं का हाल

दूसरे धार्मिक गुरुओं का मामला भी इससे कुछ भिन्न नहीं, जैसे ज़रदुश्त को लीजिए, जिसका सही जन्म-काल भी अब ठीक मालूम नहीं, ज़्यादा से ज़्यादा जो बात कही गयी है, वह यह है कि सिकन्दर की ईरान-विजय से ढाई सौ साल पहले उसके वजूद का पता चलता है अर्थात् मसीह से साढ़े पांच सौ साल पूर्व। उसकी किताब अवस्ता अपनी मूल भाषा में अब नहीं मिलती और वह भाषा भी मुर्दा हो चुकी है, जिसमें वह लिखी या ज़ुबानी बयान की गयी थी। नवीं सदी

ईसवी में उसके कुछ अंशों का अनुवाद ९ भागों में व्याख्या सहित किया गया, पर उनमें से पहले दो भाग नष्ट हो गये और उसकी जो प्राचीनतम प्रति पायी जाती है, वह तेरहवीं सदी के मध्य की लिखी हुई है। यह तो है ज़रदुश्त की पेश की हुई किताब का हाल। रही स्वयं उसके जीवन-आचरण की समस्या, तो उसके बारे में हमारी जानकारी इससे अधिक कुछ नहीं है कि ४० साल की उम्र में उसने प्रचार शुरू किया। दो साल बाद बादशाह गुश्तासप ने उसकी पैरवी अपना ली और उसका धर्म सरकारी धर्म बन गया। ७७ साल वह जीवित रहा और उसकी मौत पर जितना ज़माना गुज़रता गया, उसकी ज़िंदगी विभिन्न कहानियों का योग बनती चली गयी, जिसमें से किसी की कोई ऐतिहासिक हैसियत नहीं है।

बौद्ध धर्म की स्थिति

दुनिया के प्रसिद्धतम धार्मिक पुरुषों में से एक बुद्ध थे। ज़रदुश्त की तरह उनके बारे में भी यह गुमान किया जा सकता है कि शायद वह नबी हों, पर उन्होंने सिरे से कोई किताब ही पेश नहीं की, न उनके मानने वालों ने कभी यह दावा किया कि वह कोई किताब लाये थे। उनकी मृत्यु के सौ साल बाद उनके कथन और हालात को जमा करने का सिलसिला शुरू किया गया और सदियों तक चलता रहा। पर इसी तरह की जितनी किताबें बौद्ध धर्म की असल किताबें समझी जाती हैं, उनमें से किसी के भीतर भी कोई प्रमाण नहीं मिलता है, जिससे मालूम हो कि किस माध्यम से इन हालात, कथन तथा शिक्षाओं को संग्रहित करने वालों को बुद्ध के हालात और उनके कथन पहुंचे थे।

सिर्फ़ मुहम्मद सल्ल० का जीवन-आचरण और शिक्षाएं सुरक्षित हैं

इससे मालूम हुआ कि अगर हम दूसरे नबियों और धार्मिक गुरुओं की ओर पलट कर देखें भी तो उनके बारे में कोई प्रामाणिक माध्यम ऐसा नहीं है जिससे हम उनकी शिक्षाओं और उनके जीवन से सन्तोष और विश्वास के साथ मार्ग-दर्शन प्राप्त कर सकें। इसके बाद हमारे लिए इस के सिवा कोई शक्ल नहीं रह जाती कि हम किसी ऐसे नबी की ओर रुजू करें, जिसने कोई विश्वसनीय और किसी भी प्रकार की घट-बढ़ और मिलावट से पाक किताब छोड़ी हो और जिसके सविस्तार कथन-कर्म और हालात प्रामाणिक माध्यमों से हम तक पहुंचे हों ताकि

हम उनसे मार्ग-दर्शन प्राप्त कर सकें। ऐसा व्यक्तित्व, दुनिया के इतिहास में सिर्फ़ एक मुहम्मद सल्ल० की ज़ात है, जो हर प्रकार से स्तुत्य है।

क़ुरआन का अति सुरक्षित किताबे इलाही (ईश-ग्रन्थ) होना

उन्होंने एक किताब (क़ुरआन) इस स्पष्ट दावे के साथ प्रस्तुत की कि यह अल्लाह का कलाम है, जो मुझ पर नाज़िल हुआ है। इस किताब का जब हम जायज़ा लेते हैं तो यक़ीनी तौर पर महसूस होता है कि इसमें किसी भी प्रकार की कोई मिलावट नहीं हुई है। खुद अल्लाह के रसूल सल्ल० का अपना कोई कथन भी इसमें शामिल नहीं है, बल्कि आपके कथनों को इससे बिल्कुल अलग रखा गया है। बाइबिल की तरह आपकी ज़िन्दगी के हालात और अरबों के इतिहास और क़ुरआन नाज़िल होने के ज़माने में पेश आने वाली घटनाओं को इस कलामे-इलाही के साथ गड्ड-मड्ड नहीं किया गया है। यह विशुद्ध अल्लाह का कलाम है। इसके अन्दर अल्लाह के सिवा किसी दूसरे का एक शब्द भी शामिल नहीं हुआ है। इसके शब्दों में से एक शब्द भी कम नहीं हुआ है। अल्लाह के रसूल सल्ल० के ज़माने से ज्यों का त्यों यह हमारे ज़माने तक पहुंचा है।

यह किताब जिस वक़्त से प्यारे नबी सल्ल० पर नाज़िल होनी शुरू हुई थी, उसी वक़्त से आपने इसे लिखवाना शुरू कर दिया था। जब कोई वह्य आती तो उसी वक़्त आप अपने किसी कातिब (लिखने वाले) को बुलाते और उसे लिखवा देते थे। लिखने के बाद वह आपको सुनाया जाता था और जब आप इत्मीनान कर लेते थे कि कातिब ने उसे सही लिखा है, तब आप उसे एक सुरक्षित स्थान पर रख देते थे। हर नाज़िल होने वाली वह्य के बारे में आप कातिब को यह हिदायत भी फ़रमा देते थे कि उसे किस सूरः में किस आयत से पहले और किसके बाद दर्ज किया जाए। इस तरह आप क़ुरआन को तर्तीब भी देते रहे थे, यहां तक कि वह पूर्ण हो गया।

फिर नमाज़ के बारे में इस्लाम के शुरू ही से यह हिदायत थी कि उसमें क़ुरआन मजीद पढ़ा जाए। इसलिए सहाबा किराम रज़ि० उसके नाज़िल होने के साथ-साथ उसको याद करते जाते थे। बहुत-से लोगों ने उसे पूरा याद कर लिया और उनसे बहुत ज़्यादा बड़ी तायदाद ऐसे लोगों की थी, जिन्होंने कम व बेश उसके बहुत से हिस्से अपने स्मृति-पटल पर सुरक्षित कर लिये थे, इनके अलावा

अनेकों सहाबा (प्यारे नबी सल्ल० के साथी), जो पढ़े-लिखे थे, क़ुरआन के विभिन्न भागों को अपने आप लिख भी रहे थे, इस तरह क़ुरआन अल्लाह के रसूल सल्ल० की पुण्य जीवनी ही में चार तरीक़ों से सुरक्षित हो चुका था –

१. आपने स्वयं वह्य के कातिबों से उसको शुरू से आखिर तक लिखवाया,

२. बहुत से सहाबा रज़ि० ने पूरे का पूरा क़ुरआन शब्द-शब्द कर के याद कर लिया था,

३. सहाबा किराम रज़ि० में कोई ऐसा न था, जिसने क़ुरआन का कोई न कोई हिस्सा, थोड़ा या बहुत याद न कर लिया हो, क्योंकि उसे नमाज़ में पढ़ना ज़रूरी था और सहाबा रज़ि० की तायदाद का अन्दाज़ा इससे कर लीजिए कि अल्लाह के रसूल सल्ल० के साथ आख़िरी हज में एक लाख चालीस हज़ार सहाबा रज़ि० शरीक थे।

४. पढ़े-लिखे सहाबा की एक अच्छी-भली तायदाद ने अपने तौर पर क़ुरआन को लिख भी लिया और अल्लाह के रसूल सल्ल० को सुनाकर उसके सही होने का इत्मीनान भी कर लिया था।

तो यह एक अकाट्य ऐतिहासिक तथ्य है कि आज जो क़ुरआन हमारे पास मौजूद है, यह शब्द-शब्द कर के वही है, जिसे अल्लाह के रसूल सल्ल० ने अल्लाह के कलाम की हैसियत से पेश फ़रमाया था। हुज़ूर सल्ल० के देहान्त के बाद आप के पहले ख़लीफ़ा हज़रत अबूबक्र रज़ि० ने तमाम हाफिज़ों और तमाम लिखित पन्नों को जमा करके उनकी एक पूर्ण प्रति पुस्तक रूप में लिखवा ली। हज़रत उस्मान रज़ि० के ज़माने में उसी की नक़लें सरकारी तौर पर इस्लामी दुनिया के केन्द्रीय स्थानों को भेजी गयीं। इनमें से दो नक़लें आज भी दुनिया में मौजूद हैं – एक इस्तम्बोल में और दूसरी ताशक़न्द में। जिसका जी चाहे क़ुरआन मजीद की कोई प्रकाशित प्रति ले जाकर उनसे मिला ले, कोई अन्तर वह न पाएगा और अन्तर हो भी कैसे सकता है, जबकि अल्लाह के रसूल सल्ल० के ज़माने से लेकर आज तक हर पीढ़ी में लाखों और करोड़ों हाफिज़ मौजूद रहे हैं। एक लफ़्ज़ भी अगर कोई आदमी बदले, तो ये हाफ़िज़ उसकी ग़लती पकड़ लेंगे। पिछली सदी के आखिर में जर्मनी की म्युनिख युनिवर्सिटी के एक इंस्टटीच्यूट ने इस्लामी जगत के विभिन्न भागों से हर काल के लिखे हुए क़ुरआन मजीद की हस्तलिखित और प्रकाशित ५२ हज़ार प्रतियां जमा की थीं। पचास साल तक उन पर शोध-कार्य किया गया। अन्त में जो रिपोर्ट पेश की गयी, वह यह थी कि इन प्रतियों में किताबत (लिखाई) की ग़लतियों के सिवा कोई अन्तर नहीं है, हालांकि यह पहली सदी हिजरी से चौदहवीं सदी तक की प्रतियां थीं और संसार के हर भाग से प्राप्त

की गयी थीं। अफ़सोस कि दूसरे विश्व महायुद्ध में जब जर्मनी पर बम वर्षा की गयी तो वह इंस्टीच्यूट तबाह हो गया, लेकिन उसके शोध परिणाम संसार से समाप्त नहीं हुए।

एक और बात क़ुरआन के बारे में यह भी दृष्टि में रखिए कि वह जिस भाषा में उतरा था, वह एक जीवित भाषा है। इराक़ से मोरक्को तक लगभग १२ करोड़ इंसान आज भी इसे मातृ भाषा के रूप में बोलते हैं और ग़ैर-अरब दुनिया में भी लाखों आदमी इसे पढ़ते और पढ़ाते हैं। अरबी भाषा की व्याकरण, उस का शब्द-कोष, उसके शब्दों के उच्चारण, और उसके मुहावरे १४ सौ वर्ष से ज्यों के त्यों स्थापित हैं। आज हर अरबी भाषी उसे पढ़कर इसी तरह समझ सकता है, जिस तरह १४ सौ वर्ष पहले के अरब समझते थे।

यह है मुहम्मद सल्ल० की एक अहम खूबी, जो उनके सिवा किसी नबी और किसी धर्म-गुरु को प्राप्त नहीं है। अल्लाह की ओर से मानव-जाति के मार्ग-दर्शन के लिए जो किताब उन पर नाज़िल हुई थी, वह अपनी असल भाषा में अपने मूल शब्दों के साथ बिना परिवर्तन मौजूद है।

रसूल सल्ल० के जीवन-आचरण की प्रामाणिकता

अब दूसरी खूबी को लीजिए, जिसमें अल्लाह के रसूल सल्ल० तमाम नबियों और धर्म-गुरुओं में प्रमुख हैं, वह यह कि आपकी लायी हुई किताब की तरह आपका जीवन-आचरण भी सुरक्षित है, जिससे हम जीवन के हर विभाग में रहनुमाई हासिल कर सकते हैं। बचपन से लेकर आखिरी सांस तक जितने लोगों ने आपको देखा, आपकी ज़िन्दगी के हालात देखे. आपकी बातें सुनीं, आपके भाषण सुने, आपको किसी चीज़ का हुक्म देते सुना या किसी चीज़ से मना करते सुना, उनकी एक बड़ी तायदाद ने सब कुछ याद रखा और बाद की नस्ल तक उसे पहुंचाया। कुछ शोधकों के नज़दीक ऐसे लोगों की तायदाद एक लाख तक पहुंचती है, जिन्होंने आंखों देखी और कानों सुनी बातें बाद की नस्ल तक पहुंचायी थीं।

अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कुछ हुक्मों को खुद लिखवा कर भी कुछ लोगों को दिए या भेजे थे जो बाद के लोगों को मिले। सहाबा में से कम से कम छः सहाबी ऐसे थे, जिन्होंने आपकी हदीसें लिखकर आपको सुनायी थीं, ताकि उनमें कोई ग़लती न रह जाए। ये लिखित चीज़ें भी बाद के आने वालों को मिलीं। हुज़ूर सल्ल० के देहावसान के बाद कम से कम पचास सहाबा ने आपके हालात, आपकी

बातें और घटनाएं लिखित रूप में जमा कीं और ज्ञान का यह भंडार भी उन लोगों तक पहुंचाया, जिन्होंने बाद में हदीसों को संग्रहित करने की सेवा की। फिर जिन सहाबा रज़ि० ने जीवन-आचरण की जानकारियां ज़ुबानी पहुंचायीं, उनकी तायदाद, जैसा कि मैं कह चुका हूं, कुछ शोधकों के नज़दीक एक लाख तक पहुंचती है और यह कोई अजीब बात नहीं है, क्योंकि अन्तिम हज, जो अल्लाह के रसूल सल्ल० ने अदा फ़रमाया, जिसे 'हज्जतुल विदाअ' कहा जाता है, उसमें एक लाख चालीस हज़ार आदमी मौजूद थे, इतने आदमियों ने आपको हज करते हुए देखा, आप से हज का तरीक़ा सीखा, वे भाषण सुने जो इस हज के मौक़े पर आपने किए थे, कैसे सम्भव है कि इतने लोग जब ऐसे अहम मौक़े पर आपके साथ हज में शरीक होने के बाद अपने-अपने इलाक़ों में वापस पहुंचे होंगे, तो वहां उनके रिश्तेदारों, दोस्तों और देशवासियों ने उनसे इस यात्रा की बातों को न पूछा हो और हज के हुक्मों को न मालूम किया हो। इसी से अन्दाज़ा कर लीजिए कि अल्लाह के रसूल सल्ल० जैसे महान व्यक्तित्व के इस दुनिया से गुज़र जाने के बाद लोग किस चाव के साथ आपके हालात, आपकी बातें, आपके हुक्मों और हिदायतों को उन लोगों से पूछते होंगे, जिन्होंने आपको देखा था और आपकी बातें सुनी थीं।

सहाबा रज़ि० से जो बातें बाद की नस्लों को पहुंची थीं, उनके बारे में शुरू ही से यह तरीक़ा अपनाया गया था कि जो आदमी भी अल्लाह के रसूल सल्ल० से जोड़ कर कोई बात कहता, उसको यह बताना पड़ता था कि उसने वह बात किस से सुनी है और ऊपर सिलसिला-ब-सिलसिला कौन किस से वह बात सुनता और आगे बयान करता रहा है। इस तरह अल्लाह के रसूल सल्ल० तक रिवायत की पूरी कड़ियां देखी जाती थीं, ताकि यह इत्मीनान कर लिया जाए कि वह सही तौर से हुज़ूर सल्ल० से नक़ल की गयी है। अगर रिवायत की पूरी कड़ियां न मिलती थीं, तो उसके सही होने में सन्देह हो जाता था। अगर कड़ियां नबी सल्ल० तक पहुंच जातीं, लेकिन बीच में कोई उल्लेखकर्ता अविश्वसनीय होता, तो ऐसी रिवायत भी स्वीकार न की जाती थी। आप तनिक विचार करें, तो आपको महसूस होगा कि दुनिया के किसी दूसरे इंसान के हालात इस तरह संग्रहीत नहीं हुए हैं। यह खूबी सिर्फ़ हज़रत मुहम्मद सल्ल० को हासिल है कि आप के बारे में कोई बात भी प्रमाण के बिना स्वीकार नहीं की गयी और प्रमाण में भी केवल यही नहीं देखा गया कि एक हदीस की रिवायत का सिलसिला अल्लाह के रसूल सल्ल० तक पहुंचता है या नहीं, बल्कि यह भी देखा गया कि इस सिलसिले के तमाम रिवायत करने वाले (उल्लेख कर्ता) भरोसे के क़ाबिल हैं या नहीं, इस उद्देश्य के

लिए रिवायत करने वालों के हालात की भी पूरी जांच-पड़ताल की गयी और इस पर विस्तृत पुस्तकें लिख दी गयीं, जिनसे मालूम किया जा सकता है कि कौन विश्वसनीय था और कौन न था, किसका चरित्र व आचरण कैसा था, किस की स्मृति-शक्ति कितनी प्रबल थी, कौन उस व्यक्ति से मिला था, जिससे उसने रिवायत नक़ल की है और कौन उससे मुलाक़ात के बिना ही उस का नाम लेकर रिवायत बयान कर रहा है। इस तरह इतने बड़े पैमाने पर रिवायत करने वालों के बारे में जानकारियां जुटायी गयी हैं कि आज भी हम एक-एक हदीस के बारे में जांच कर सकते है कि वह विश्वासनीय माध्यमों से आयी है या अविश्वासनीय माध्यमों से? क्या मानव-इतिहास में कोई दूसरा आदमी ऐसा पाया जाता है, जिसकी ज़िन्दगी के हालात इतने प्रामाणिक ढंग से नक़ल किए गये हों? और क्या इसकी कोई मिसाल मिलती है कि एक व्यक्ति के हालात की जांच के लिए उन हज़ारों लोगों के हालात पर किताबें लिख दी गयी हों, जिन्होंने उस एक व्यक्तित्व के बारे में कोई रिवायत बयान की हो? वर्तमान युग के ईसाई और यहूदी विद्वान हदीसों के सही होने में संदेह पैदा करने के लिए एड़ी-चोटी का जो ज़ोर लगा रहे हैं, उसकी असल वजह यह द्वेष है कि उन के धर्म-ग्रन्थों और उनके धर्म-गुरुओं के हालात का सिरे से कोई प्रमाण ही नहीं है। इसी जलन के कारण उन्होंने इस्लाम और क़ुरआन और मुहम्मद सल्ल० पर आलोचना के मामले में ज्ञानात्मक कसौटियों को भी पीठ पीछे डाल दिया है।

हुज़ूर सल्ल० की ज़िन्दगी का हर पहलू स्पष्ट और मालूम है

हज़रत मुहम्मद सल्ल० के जीवन-आचरण की सिर्फ़ यही एक खूबी नहीं है कि यह हमें अति प्रामाणिक माध्यमों से पहुंची है, बल्कि उसकी एक प्रमुख विशेषता यह भी है कि उसमें आपकी ज़िन्दगी का हर पहलू इतने विस्तार से आ गया है, जो इतिहास के किसी दूसरे व्यक्ति के जीवन के बारे में नहीं मिलता। आपका ख़ानदान कैसा था, आपकी नुबूवत (नबी बनने) से पहले की ज़िन्दगी कैसी थी, आपको नुबूवत किस तरह मिली? आप पर वह्य कैसे नाज़िल होती थी? आपने इस्लामी आहवान का प्रचार किस प्रकार किया? विरोधों और रुकावटों का मुक़ाबला किस तरह किया? अपने साथियों को कैसे प्रशिक्षित किया? अपने घर में आप किस तरह रहते थे, अपनी बीवियों और बच्चों से आपका बर्ताव कैसा था? अपने दोस्तों और दुश्मनों से आपका मामला कैसा था, किस नैतिकता तथा चरित्र की शिक्षा आप देते थे, और आपका अपना चरित्र कैसा था? किस

चीज़ का आपने हुक्म दिया? किस काम से आपने मना किया? किस काम को आपने होते देखा और मना न किया और किस चीज़ को होते देखा और मना फ़रमाया, यह सब कुछ मामूली-मामूली बातों में भी विस्तार के साथ हदीस और सीरत (जीवन-आचरण) की किताबों में मौजूद है। आप एक फ़ौजी जनरल भी थे और आपके नेतृत्व में जितनी लड़ाइयां हुईं, उन सब का विस्तृत विवेचन हमें मिलता है। आप एक शासक भी थे और आपके शासन के तमाम हालात हमें मिलते हैं। आप एक जज भी थे और आपके सामने पेश होने वाले मुकदमों की पूरी-पूरी रिपोर्टें हमें मिलती हैं और यह भी मालूम होता है कि किस मुक़दमे में आपने क्या फैसला फ़रमाया। आप बाज़ारों में भी निकलते थे और देखते थे कि लोग क्रय-विक्रय के मामले किस तरह करते हैं। जिस काम को ग़लत होते हुए देखते उस से मना फ़रमाते थे और जो काम सही होते देखते, उसकी पुष्टि करते थे। तात्पर्य यह कि जीवन का कोई विभाग ऐसा नहीं है, जिसके बारे में आपने सविस्तार आदेश न दिया हो।

यही वजह है कि हम किसी अनुचित पक्षपात के बिना, पूरे ज्ञान और विश्वास के साथ यह कहते हैं कि तमाम नबियों और धर्म-गुरुओं में से केवल एक मुहम्मद सल्ल० ही वह हस्ती हैं, जिसकी तरफ़ मानव-जाति हिदायत व रहनुमाई के लिए रुजूअ कर सकती है, क्योंकि आपकी पेश की हुई किताब अपने मूल शब्दों में सुरक्षित है और आपका जीवन-आचरण उन तमाम अनिवार्य विस्तृत विवेचनों के साथ, जो मार्ग-दर्शन के लिए ज़रूरी हैं, अति प्रामाणिक तथा विश्वसनीय माध्यमों से हम तक पहुंचे हैं।

अब हमें यह देखना है कि आपका जीवन-आचरण हमें क्या सन्देश और क्या हिदायत देता है।

हुज़ूर सल्ल० का सन्देश तमाम इन्सानों के लिए है

सब से पहली चीज़, जो हमें आपके आहवान में दीख पड़ती है, वह यह है कि आप रंग व नस्ल और भाषा व देश के सारे भेद-भावों को नज़रंदाज़ करके इंसान को इंसान की हैसियत से सम्बोधित करते हैं और कुछ सिद्धान्त प्रस्तुत करते हैं, जो तमाम इन्सानों की भलाई के लिए हैं। उन सिद्धान्तों को जो भी मान ले वह मुसलमान है और एक विश्वव्यापी मुस्लिम समुदाय का व्यक्ति है, चाहे वह काला हो या गोरा, पूरब का रहने वाला हो या पच्छिम का, अरबी हो या ग़ैर अरबी, जहां भी कोई इंसान है, जिस देश या जाति या नस्ल में भी वह पैदा हुआ है, जो भाषा भी वह बोलता है, और जो रंग भी उसकी खाल का है, उससे

मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ल० आहवान करते हैं और अगर वह आपके बताए हुए सिद्धान्तों को मान लेता है, तो बिल्कुल बराबर के अधिकारों के साथ मुस्लिम समुदाय में शामिल हो जाता है। कोई छूत-छात, कोई ऊंच-नीच, कोई नस्ली या वर्गीय भेद, कोई भाषायी या भौगोलिक फूट, जो अक़ीदे का एका पैदा कर देने के बाद, एक इंसान को दूसरे इंसान से जुदा करता हो, इस समुदाय में नहीं है।

रंग व नस्ल की संकीर्णताओं का बेहतरीन इलाज

आप विचार करें तो महसूस करेंगे कि यह एक बहुत बड़ी नेमत है जो मुहम्मद सल्ल० की बदौलत मानवता को मिली है। इन्सान को सब से बढ़कर जिस चीज़ ने तबाह किया वे यही भेद-भाव हैं, जो इंसान और इंसान के बीच स्थापित कर दिए गये हैं। कहीं उनको अशुद्ध घोषित कर दिया गया और अछूत बनाकर रख दिया गया है, उसको वे अधिकार नहीं प्राप्त हैं, जो ब्राह्मण के हैं, कहीं उसको समाप्त कर देने योग्य ठहराया गया, क्योंकि वह आस्ट्रेलिया और अमरीका में ऐसे वक़्त पैदा हो गया था, जब बाहर से आने वालों को उससे ज़मीन ख़ाली कराने की ज़रूरत थी, कहीं उसको पकड़ कर ग़ुलाम बनाया गया और उससे जानवरों की तरह सेवा ली गयी, क्योंकि वह अफ़्रीक़ा में पैदा हुआ था और उसका रंग काला था। तात्पर्य यह कि मानव-जाति के लिए जाति, देश, रंग, नस्ल और भाषा के ये भेद-भाव प्राचीनतम समयों से लेकर इस ज़माने तक बहुत बड़ी मुसीबत का ज़रिया बन रहे हैं। इसी कारण लड़ाइयां होती रही हैं, इसी आधार पर एक देश दूसरे देश पर चढ़ दौड़ा है, एक जाति ने दूसरी जाति को लूटा है, और पूरी-पूरी नस्लें तबाह व बर्बाद कर दी गयी हैं। नबी सल्ल० ने इस रोग का ऐसा इलाज फ़रमाया कि इस्लाम के दुश्मन भी मान गये कि रंग-नस्ल और देश के भेद-भावों को जिस सफलता से इस्लाम ने हल किया है, ऐसी सफलता किसी को नहीं मिली।

अमरीका के अफ़्रीक़ी नस्ल के निवासियों का प्रसिद्ध नेता मैलकम अकिस, जो एक ज़माने में गोरी नस्ल के ख़िलाफ़ काली नस्ल की घोरतम संकीर्णता का शिकार था, इस्लाम स्वीकार करके जब हज के लिए गया और उसने देखा कि पूरब, पच्छिम, उत्तर, दक्षिण, हर तरफ से हर नस्ल के लोग, हर रंग के लोग, हर देश के लोग, हर भाषा बोलने वाले लोग चले आ रहे हैं, सब ने एक जैसा एहराम का पहनावा पहन रखा है, सब एक ही ज़ुबान में 'लब्बैक, लब्बैक' (मैं हाज़िर हूं, मैं हाज़िर हूं) के नारे लगा रहे हैं, एक साथ परिक्रमा कर रहे हैं और

एक ही जमाअत में एक इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ रहे हैं, तो वह पुकार उठा कि रंग व नस्ल की समस्या का सही हल यही है, न कि वह, जो हम अब तक करते रहे हैं, उस मर्हूम (स्वर्गीय) को तो ज़ालिमों ने क़त्ल कर दिया पर उसकी स्वलिखित जीवनी प्रकाशित मौजुद है, उसमें आप देख सकते हैं कि हज से कैसा गहरा असर उसने स्वीकार किया था।

यह हज तो इस्लाम की इबादतों में से सिर्फ़ एक इबादत है। अगर कोई आदमी आंखें खोल कर इस्लाम की शिक्षाओं को सामूहिक रूप से देखे तो किसी जगह भी उंगली रख कर यह नहीं कह सकता कि यह चीज़ किसी विशेष जाति या किसी कबीले या किसी नस्ल या वर्ग के स्वार्थ के लिए है, यह तो पूरे का पूरा दीन ही इस बात की गवाही दे रहा है कि यह तमाम इंसानों के लिए है और उसकी दृष्टि में वे सब इंसान बराबर हैं, जो उसके सिद्धान्त स्वीकार करके उसकी बनायी हुई विश्वव्यापी बिरादरी में शामिल हो जाएं, बल्कि यह ग़ैर-मुस्लिम के साथ भी वह व्यवहार नहीं करता, जो गोरों ने कालों के साथ किया, जो साम्राज्यवादी शक्तियों ने अपनी शासित जातियों के साथ किया, जो कम्युनिस्ट सरकारों ने अपनी राज्य-सीमा में रहने वाले ग़ैर-कम्युनिस्टों के साथ किया, यहां तक कि स्वयं अपनी पार्टी के ना-पसंदीदा सदस्यों के साथ किया।

अब हमें यह देखना है कि मानवता के कल्याण के लिए वे क्या नियम हैं जो रसूलुल्लाह सल्ल० ने पेश फ़रमाए हैं और उनमें क्या बात ऐसी है जो न केवल मानवता के हित की ज़मानत देती है, बल्कि तमाम इन्सानों को एक इकाई की लड़ी में पिरो कर एक समुदाय भी बना सकती है।

अल्लाह के एक होने की व्यापक धारणा

इनमें सब से प्रमुख अल्लाह के एक होने को स्वीकार करना है। केवल इस अर्थ में नहीं कि अल्लाह है और सिर्फ़ इस अर्थ में भी नहीं कि अल्लाह बस एक है, बल्कि इस अर्थ में कि इस सृष्टि का एक ही पैदा करने वाला, स्वामी, नियोजक, और शासक अल्लाह ही है। कोई दूसरी हस्ती पूरी सृष्टि में ऐसी नहीं है, जो प्रभुता सम्पन्न हो, जिसको हुक्म देने और मना करने का हक़ हो, जिसके हराम करने से कोई चीज़ हराम और जिसके हलाल करने से कोई चीज़ हलाल हो सकती हो। ये अधिकार उसके सिवा कोई नहीं रखता, क्योंकि जो पैदा करने वाला हो, मालिक हो उसी को यह हक़ पहुंचता है कि अपने बंदों को अपनी पैदा की हुई दुनिया में जिस चीज़ की चाहे इजाज़त दे और जिस चीज़ से चाहे मना कर दे।

इस्लाम का आहवान यह है कि अल्लाह को इस हैसियत से मानो, उसको इस हैसियत से मानो कि हम उसके सिवा किसी के बंदे नहीं हैं और उसके क़ानून के ख़िलाफ़ किसी को हम पर हुक्म चलाने का हक़ नहीं है, इस हैसियत से मानो कि हमारा सर उसके सिवा किसी के सामने झुकने के लिए नहीं बना, इस हैसियत से मानो कि हमारा जीना और मरना बिल्कुल उसके अधिकार में है। जिस वक़्त चाहे, हमें मौत दे सकता है और जिस वक़्त तक चाहे, हमें ज़िंदा रख सकता है। उसकी तरफ़ से मौत आए तो दुनिया की कोई ताक़त बचा लेने वाली नहीं और वह ज़िन्दगी दे, तो दुनिया की कोई ताक़त हलाक कर देने वाली नहीं। यह है ख़ुदा के बारे में इस्लाम की धारणा।

इस धारणा के अनुसार ज़मीन से लेकर आसमानों तक पूरी सृष्टि ख़ुदा के आदेशाधीन है और इंसान, जो इस सृष्टि में रहता है, उसका भी यही काम है कि ख़ुदा ही के आदेशाधीन बन कर रहे। अगर वह स्वच्छंद बने या ख़ुदा के सिवा किसी और का आज्ञापालन अपना ले तो उसके जीवन की व्यवस्था पूरी सृष्टि-व्यवस्था के विरुद्ध हो जाएगी। दूसरे शब्दों में इस बात को यों समझिए कि सारी सृष्टि ख़ुदा के हुक्म के तहत चल रही है। यह एक वास्तविकता है, जिसे कोई बदल नहीं सकता। अब अगर हम ख़ुदा के सिवा किसी और के हुक्म के तहत चल रहे हों या अपनी मर्ज़ी के मालिक बन कर जिधर जी चाहे चल रहे हों, तो इसका अर्थ यह होगा कि हमारी ज़िंदगी की गाड़ी पूरी सृष्टि की गाड़ी के विपरीत दिशा में चल रही है। एक स्थायी संघर्ष है जो हमारे और सृष्टि-व्यवस्था के मध्य चल रहा है।

एक और पहलू से देखिए। इस धारणा के अनुसार इंसान के लिए सही जीवन-पद्धति केवल यह है कि वह अल्लाह का आज्ञापालन करे, क्योंकि वह रचना है और अल्लाह उसका रचयिता है। रचना होने की हैसियत से उसका स्वच्छंद हो जाना भी ग़लत है और अपने रचयिता के सिवा दूसरों की बन्दगी करना भी ग़लत है। इन दोनों रास्तों में से जो रास्ता भी वह अपनाएगा, वह सच्चाई से टकराएगा और सच्चाई से टकराने का नुक़्सान ख़ुद टकराने वाले ही को पहुंचता है। सच्चाई का इससे कुछ नहीं बिगड़ता।

'रब' की बन्दगी का आहवान

अल्लाह के रसूल सल्ल० का आहवान यह है कि इस टकराव को ख़त्म करो, तुम्हारी ज़िन्दगी का क़ानून और नियम भी वही होना चाहिए जो पूरी सृष्टि का

है। तुम न ख़ुद क़ानून बनाने वाले बनो और न किसी दूसरे का यह हक़ मानो कि वह ख़ुदा की ज़मीन में ख़ुदा के बन्दों पर अपना क़ानून चलाए। सच्चा क़ानून तो सिर्फ़ दुनिया के रब का क़ानून है, बाक़ी सब क़ानून झूठे हैं।

रसूल के आज्ञापालन का आहवान

यहां पहुंच कर हमारे सामने अल्लाह के रसूल सल्ल० के आहवान का दूसरा अंश आता है और वह आपका यह दोटूक बयान है कि मैं अल्लाह का नबी हूं और मानव-जाति के लिए उसने अपना क़ानून मेरे ज़रिए भेजा है। मैं ख़ुद भी इस क़ानून का पाबन्द हूं, खुद मुझे भी इस में परिवर्तन करने का अधिकार नहीं है, मैं पैरवी करने पर लगाया गया हूं, अपनी ओर से कोई चीज़ गढ़ने का अधिकारी नहीं हूं। यह क़ुरआन वह क़ानून है जो मुझ पर ख़ुदा की ओर से नाज़िल किया गया और मेरी सुन्नत वह क़ानून है जो ख़ुदा के हुक्म और उसके कथन के आधार पर मैं जारी करता हूं, इस क़ानून के आगे नतमस्तक हो जाने वाला सब से पहले मैं हूं, इसके बाद तमाम इन्सानों को आहवान करता हूं कि हर दूसरे क़ानून की पैरवी छोड़ कर इस क़ानून की पैरवी करें।

अल्लाह के बाद आज्ञापालन का अधिकारी अल्लाह का रसूल है

किसी को यह सन्देह न हो कि अल्लाह के रसूल सल्ल० स्वयं अपनी सुन्नत का आज्ञापालन और पैरवी कैसे कर सकते थे, जबकि वह आपका अपना ही कथन या कार्य होता था? इस मामले की असल सच्चाई यह है कि क़ुरआन जिस तरह ख़ुदा की तरफ़ से था, उसी तरह रसूल होने की हैसियत से जो हुक्म आप देते या जिस काम से आप मना फ़रमाते या जिस तरीक़े को आप मुक़र्रर करते थे, वह भी अल्लाह की तरफ़ से होता था। इसी का नाम सुन्नते रसूल है और इसका पालन आप स्वयं भी उसी तरह करते थे, जिस तरह सब ईमान वालों के लिए उसका पालन अनिवार्य था। यह बात ऐसे मौक़े पर पूरी तरह स्पष्ट हो जाती थी जब सहाबा किराम रज़ि० किसी मामले में आपसे पूछते थे कि ऐ अल्लाह के रसूल सल्ल०! क्या आप यह अल्लाह के हुक्म से फ़रमा रहे हैं या यह आपकी अपनी राय है और आप जवाब देते थे कि अल्लाह का हुक्म नहीं है, बल्कि मेरी राय है और यह मालूम होने के बाद सहाबा रज़ि० हुज़ूर सल्ल० की राय से मतभेद

कर के अपना प्रस्ताव रखते थे और आप अपनी राय छोड़कर उनका प्रस्ताव स्वीकार कर लेते थे। इसी तरह यह बात उन मौक़ों पर भी खुल जाती थी, जब आप किसी मामले में सहाबा रज़ि० से मश्विरा तलब फ़रमाते थे। यह मश्विरा ख़ुद इस बात की दलील होता था कि उस मामले में अल्लाह की ओर से कोई आदेश नहीं आया है, क्योंकि अल्लाह का हुक्म होता, तो इसमें मश्विरे का कोई सवाल ही नहीं पैदा हो सकता था। ऐसे अवसर प्यारे रसूल सल्ल० के युग में बार-बार आए हैं, जिनका विस्तृत विवेचन हदीसों में हमको मिलता है। बल्कि सहाबा रज़ि० का तो यह बयान है हमने हुज़ूर सल्ल० से ज़्यादा मश्विरा करने वाला किसी को नहीं देखा। इस पर आप विचार करें तो आपको महसूस होगा कि यह भी हुज़ूर सल्ल० की सुन्नत ही थी कि जिस मामले में अल्लाह का हुक्म न हो, उसमें मश्विरा किया जाए और कोई दूसरा हाकिम तो दूर की बात, अल्लाह का रसूल तक अपनी निजी राय को लोगों के लिए ऐसा फ़रमान न बताए जिसका मानना लोगों के लिए अनिवार्य हो। इस तरह अल्लाह के रसूल ने मुस्लिम समुदाय को शूरा (मश्विरा लेने) के तरीक़े से काम करने की ट्रेनिंग दी और लोगों को यह सिखाया कि जिस मामले मे अल्लाह का हुक्म हो, उसमें बिना कुछ कहे-सुने आज्ञापालन करो और जहां अल्लाह का हुक्म न हो, वहां राय की आज़ादी का अधिकार बिना किसी भय और ख़तरे के इस्तेमाल करो।

आज़ादी का सच्चा चार्टर

यह मानव-जाति के लिए आज़ादी का वह चार्टर है जो सत्य-धर्म के सिवा दुनिया में किसी ने उसको नहीं दिया। अल्लाह के बंदे सिर्फ़ एक अल्लाह ही के बन्दे हों और किसी के बन्दे न हों, यहां तक कि अल्लाह के रसूल के बन्दे भी न हों। उसने इंसान को एक ख़ुदा के सिवा हर दूसरे की बन्दगी से आज़ाद कर दिया और इंसान पर से इंसान की ख़ुदाई हमेशा के लिए ख़त्म कर दी।

इसके साथ एक बहुत बड़ी नेमत, जो इस संदेश ने इंसान को अता की, वह एक ऐसे क़ानून की सर्वोपरिता है, जिसे तोड़ने-मरोड़ने और तब्दीली करने का शिकार बनाने का अधिकार किसी बादशाह या तानाशाह या लोकतांत्रिक विधानसभाओं या इस्लाम स्वीकार करने वाली किसी क़ौम को हासिल नहीं है। यह क़ानून भलाई-बुराई के स्थायी मूल्य इंसान को देता है, जिन्हें बदल कर कभी कोई भलाई को बुराई और बुराई को भलाई नहीं बना सकता।

ख़ुदा के हुज़ूर जवाबदेही का विचार

तीसरी बात जो अल्लाह के रसूल सल्ल० ने ख़ुदा के बन्दों को बतायी, वह यह है कि तुम ख़ुदा के सामने जवाबदेह हो। तुम इस दुनिया में बे-नकेल के ऊंट बना कर नहीं छोड़ दिए गये हो कि अपनी मनमानी जो चाहो करो, जिस खेत में चाहो, चरते फिरो और कोई तुम्हें पूछने वाला न हो, बल्कि तुम अपनी एक-एक बात और अपने पूरे व्यावहारिक जीवन के कर्मों का हिसाब अपने रचयिता तथा उपास्य को देने वाले हो। मरने के बाद तुम्हें उठना पड़ेगा और अपने पालनहार के सामने पूछ-ताछ के लिए पेश होना पड़ेगा।

यह एक ऐसी प्रबल नैतिक शक्ति है, जो अगर मानव के मन में बैठ जाए, तो उसका हाल ऐसा होगा, जैसे उसके साथ हर वक़्त एक चौकीदार लगा हुआ है, जो बुराई के हर इरादे पर उसे टोकता और हर क़दम पर उसे रोकता है। बाहर कोई पकड़ करने वाली पुलिस और सज़ा देने वाली सरकार मौजूद हो या न हो, उसके भीतर एक ऐसा चौकीदार बैठा रहेगा, जिसकी पकड़ के डर से वह कभी तंहाई में या जंगल में या अंधेरे में या सुनसान जगह में भी ख़ुदा की ना-फ़रमानी न कर सकेगा। इससे बढ़कर इंसान का नैतिक सुधार और उसके भीतर एक सुदृढ़ चरित्र पैदा करने का कोई साधन नहीं है। दूसरे जितने साधनों से भी आप चरित्र बनाने की कोशिश करेंगे इससे आगे न बढ़ सकेंगे कि भलाई दुनिया में लाभप्रद और बुराई हानिप्रद है और यह कि ईमानदारी एक अच्छी नीति है इसका अर्थ यह हुआ कि नीति की दृष्टि से अगर बुराई और बेईमानी लाभप्रद हो और उससे हानि का डर न हो, तो उसे बिना किसी संकोच के कर डाला जाए। इसी दृष्टिकोण का ही तो यह फल है कि जो लोग अपने व्यक्तिगत जीवन में अच्छा रवैया रखते हैं, वही अपने राष्ट्रीय चरित्र में अति घटिया दर्जे के बे-ईमान, धोखेबाज़, लुटेरे, ज़ालिम और जाबिर बन जाते हैं, बल्कि व्यक्तिगत जीवन में भी वे अगर कुछ मामलों में अच्छे होते हैं, तो कुछ दूसरे मामलों में बहुत बुरे होते हैं। आप देखेंगे कि एक ओर वे कारोबार में खरे और व्यवहार में मृदु हैं, तो दूसरी ओर शराबी, ज़ानी, जुवारी और सख़्त बदकार और स्याहकार हैं। उनका कहना यह है कि आदमी की पब्लिक ज़िन्दगी और चीज़ है और प्राइवेट ज़िन्दगी और चीज़। निजी ज़िन्दगी के किसी ऐब पर कोई टोके, तो इनका गढ़ा-गढ़ाया जवाब यह होता है कि अपने काम से काम रखो।

इसके बिल्कुल विपरीत आख़िरत का अक़ीदा है, जो कहता है कि बुराई हर

हाल में बुराई है, चाहे दुनिया में वह लाभप्रद हो या हानिप्रद, जो आदमी ख़ुदा के सामने जवाबदेही का एहसास रखता हो, उसकी ज़िन्दगी में पब्लिक और प्राइवेट के दो विभाग अलग-अलग नहीं हो सकते। वह ईमानदारी अपनाता है, तो इस वजह से नहीं कि यह अच्छी पालिसी है, बल्कि उसके वजूद ही में ईमानदारी शामिल हो जाती है और वह सोच ही नहीं सकता कि उसका काम कभी बे-ईमानी करना भी हो सकता है। उसका अक़ीदा उसे यह सिखाता है कि तुम अगर बे-ईमानी करोगे तो जानवरों की सतह से भी नीचे जा पड़ोगे, जैसा कि क़ुरआन मजीद में इर्शाद हुआ है कि –

'हमने इंसान को बेहतरीन बनावट पर पैदा किया, फिर उसे औंधा कर सब नीचों से नीच कर दिया।'

इस तरह अल्लाह के रसूल सल्ल० की रहनुमाई से इंसान को केवल एक स्थायी नैतिक मूल्य रखने वाला अपरिवर्तनशील क़ानून ही नहीं मिला, बल्कि व्यक्तिगत तथा राष्ट्रीय चरित्र-आचरण के लिए ऐसा आधार भी मिल गया, जो कभी डिगने वाला नहीं है, जो इस बात का मुहताज नहीं है कि कोई सरकार मौजूद हो, कोई पुलिस मौजूद हो, कोई अदालत मौजूद हो तो आप सीधे रास्ते पर चलें, वरना अपराधी बन कर रहें।

सन्यास के बजाए दुनियादारी में नैतिकता का उपयोग

अल्लाह के रसूल सल्ल० का आहवान एक और अहम शिक्षा हमें देता है और वह यह है कि नैतिकता सन्यासियों के एकान्त वास के लिए नहीं है, दरवेशों की ख़ानक़ाहों के लिए नहीं है, बल्कि दुनिया की ज़िन्दगी के हर विभाग में बरतने के लिए है, जिस आध्यात्मिक और नैतिक उच्चता को दुनिया सन्यासियों और दरवेशों में खोजती थी, अल्लाह के रसूल सल्ल० उसे हुकूमत की गद्दी पर और अदालत की कुर्सी पर उठा लाए। आपने व्यापार के कारोबार में ईश-भय और ईमानदारी से काम लेना सिखाया। आपने पुलिस और सेना के सिपाहियों को संयम और परहेज़गारी का सबक़ दिया। आपने इंसान की इस ग़लतफ़हमी को दूर किया कि ख़ुदा का वली (प्यारा) वह होता है जो संसार-त्याग पर बस अल्लाह-अल्लाह करता है। आपने बताया वली होना इसका नाम नहीं है, बल्कि वली होना तो इसको कहते हैं कि आदमी एक हाकिम, एक जज, एक सेनापति, एक थानेदार, एक व्यापारी तथा शिल्पी और दूसरी तमाम हैसियतों से एक पूरा दुनियादार

बनकर भी हर उस मौक़े पर अपना ईश्वरवादी और ईमानदार होना साबित कर दे, जहां उसके ईमान को आज़माइश का सामना करना पड़े। इस तरह आप नैतिकता और आध्यात्मिकता को सन्यास की सीमाओं से निकाल कर अर्थ, समाज, राजनीति, न्याय और लड़ाई और समझौते के मैदानों में ले आए और यहां शुद्ध चरित्र का शासन चलाया।

हुज़ूर सल्ल० की हिदायत का प्रभाव

यह इसी रहनुमाई का प्रभाव था कि अपनी नुबुवत के आरम्भ में जिन लोगों को आपने डाकू पाया था, उनको इस हालत में छोड़ा कि वे अमानतदार और अल्लाह के बंदों की जान व माल और आबरू की हिफ़ाज़त करने वाले बन गये थे, जिन लोगों को हक़ मारने वाला पाया था, उन्हें हक़ अदा करने वाला, हकों की हिफ़ाज़त करने वाला और हक दिलवाने वाला बना कर छोड़ा। आपसे पहले दुनिया उन हाकिमों को जानती थी जो ज़ुल्म और ज़्यादती से प्रजा को दबा कर रखते थे और ऊंचे-ऊंचे महलों में रहकर अपना प्रभुत्व जमाते थे, आपने उसी दुनिया को ऐसे हाकिमों से परिचित कराया, जो बाज़ारों में आम इंसानों की तरह चलते थे और न्याय और इंसाफ़ से दिलों पर हुकूमत करते थे। आपसे पहले दुनिया उन सेनाओं को जानती थी जो किसी देश में घुसती थीं, तो हर ओर क़त्लेआम बरपा करतीं, बस्तियों को आग लगातीं और विजित राष्ट्र की औरतों को बे-आबरू करती फिरती थीं। आपने उसी दुनिया को ऐसी सेनाओं से परिचित कराया, जो किसी शहर में विजेता के रूप में प्रवेश करती तो दुश्मन की सेना के सिवा किसी पर हाथ न उठाती थीं और जीते हुए शहर से वसूल किए हुए टैक्स तक उन्हें वापस कर देती थीं। मानव-इतिहास देशों और शहरों की विजय के क़िस्सों से भरा पड़ा है, पर मक्का-विजय की कोई नज़ीर आपको इतिहास में न मिलगी। जिस शहर के लोगों ने तेरह वर्ष तक अल्लाह के रसूल सल्ल० पर ज़ुल्म व सितम ढाया था, उसी शहर में आपका विजेता के रूप में दाख़िला इस शान से हुआ था कि आपका सर ख़ुदा के आगे झुका जा रहा था, आपका माथा ऊंट के कजावे से लगा जा रहा था और आपके व्यवहार में दंभ व अभिमान का अंश तक न था। वही लोग जो १३ वर्ष तक आप पर ज़ुल्म व सितम करते रहे थे, जिन्होंने आपको हिजरत पर मजबूर कर दिया था और जो हिजरत के बाद भी आठ वर्ष तक आपसे लड़ते रहे थे, जब परास्त होकर आप के सामने पेश हुए तो उन्होंने आपसे रहम व करम की इल्तिजा की और आपने बदला लेने के बजाए फ़रमाया कि --

'आज तुम पर कोई पकड़ नहीं, जाओ, तुम छोड़ दिए गये।'

अल्लाह के रसूल सल्ल० के इस नमूने का जो प्रभाव आपके मुस्लिम समुदाय पर पड़ा है, उसका अगर कोई व्यक्ति अन्दाज़ा करना चाहे, तो इतिहास में स्वयं देख ले कि मुसलमान जब स्पेन में दाख़िल हुए, तो उनका रवैया क्या था और जब ईसाइयों ने उन पर विजय पायी, तो उनके साथ क्या व्यवहार किया गया। सलेबी लड़ाइयो के ज़माने में जब ईसाई बैतुलमक़्दिस में दाखिल हुए, तो उन्होंने मुसलमानों के साथ क्या बर्ताव किया और मुसलमानों ने जब बैतुलमिक़्दस को उनसे वापस लिया तो ईसाइयों के साथ उनका बर्ताव, क्या था।

सज्जनो! रसूले अक्रम सल्ल० का जीवन-आचरण एक अथाह समुद्र है, जिसका एहाता करना किसी बड़ी किताब में भी संभव नहीं है, एक भाषण में कहां से संभव है? फिर भी मैंने अधिक से अधिक संभव संक्षेप के साथ उसके कुछ प्रमुख पहलुओं पर रोशनी डाली है। भाग्यवान हैं वे लोग जो हिदायत के एकमात्र साधन से रहनुमाई ले सकें।

व आख़िरु दअवाना अनिल हम्दु लिल्लाहि रब्बिल आलमीन०